अप्रैल १९८९ हिंदी पत्रिका में प्रकाशित

दो अतियों के बीच

उन दिनों अधिकांश लोग इन धाराओं में ही बहते थे। दोनों अतियों की धाराएं। एक प्रवृत्ति की, एक निवृत्ति की। पर दोनों ही बेहद दूषित हो चुकी थी। प्रवृत्ति मार्गीय लोग काम-भोग के कीचड़ में आकंठ डूबे हुए किन्हीं-पेशेवर पुरोहितों से निरीह पशुओं की हत्याएं करवाकर भिन्न भिन्न प्रकार के शोणित यज्ञ करवाते थे और यह मानते थे कि इससे अग्निदेव या अन्य देव-ब्रह्म हम पर प्रसन्न होकर हमें अमरत्व प्रदान करेंगें। निस्संदेह यह मार्ग शुद्ध धर्म के विमुख पापवर्धन का ही था। इसीलिए इसे –

'हीनो गम्मो पोथुज्जनिको अनरियो अनत्थसंहितो'

कहा गया। याने हीन, गँवार, पृथकजन, अनार्यों का अनर्थ-संग्राहक मार्ग।

दूसरा निवृत्ति का मार्ग। वह भी अतियों में जाकर –

"अत्त किलमथानुयोगो दुक्खो अनरियो अनत्थसंहितो"

दुखद आत्मक्लेश का मार्ग, अनार्यों का अनर्थ संग्राहक मार्ग बन गया था। मुक्तिपथ के सर्वथा प्रतिकूल। भगवान ने इन दोनों अतियों को त्यागकर पुरातन, सनातन, मध्यम मार्ग खोज निकाला जो कि सर्वहितकारी सिद्ध हुआ। अनेक लोग जो ऐसे अतियों के मार्ग पर भटक रहे थे, उन्हें मुक्ति का सत्पथ मिला। धर्म संबंधी सारी शंकाएं दूर हुईं। दृढ़तापूर्वक सत्पथ पर चलकर सहज ही मुक्त अवस्था तक पहुँचे और अपना कल्याण साध सके।

इसी संदर्भ में भगवान के जीवनकाल की एक घटना।

एक अत्यंत दिरिद्र कुल में जन्मा जम्बुक नाम का व्यक्ति। युवा होकर प्रव्रजित हुआ और मुक्ति की खोज में आत्मक्लेश की साधना करने लगा। मुक्ति से दूर गलत रास्ते पड़ गया। अतियों के मार्ग को मुक्ति का मार्ग समझ बैठा। आत्यंतिक काय-पीड़न को चित्त-प्रक्षालन की विधि समझ बैठा। जीवन का अधिकांश समय इस मिथ्या मार्ग पर बिताता रहा। पर कुछ भी पल्ले न पड़ा।

एक दिन उसके सौभाग्य से भगवान उस रास्ते से गुजरे। उसकी दयनीय दशा देखकर उसे मंगलमयी मध्यमा प्रतिपदा का उपदेश दिया। किसी पूर्व जीवन के कुशल कर्म के फलस्वरूप बात उसकी समझ में आयी। गलत रास्ता त्यागकर विपश्यना साधना का अभ्यास करने लगा। चंद दिनों में ही श्रोतापन्न फललाभी हुआ। इससे उत्साह और बढ़ा। लगातार साधना की निरंतरता बनाए रखते हुए समय पकने पर वह परम विमुक्त अर्हंत अवस्था को प्राप्त हुआ। समस्त भवदुःखों से नितांत विमुक्त हुआ। जीवन के संध्याकाल में जब अंतिम शरीर को छोड़ने का समय आया तो अपने निरर्थक क्लिष्ट जीवन को त्यागने और सम्यक् मार्ग पर चलकर विमुक्त हो जाने की घटना याद कर और धर्म के प्रति कृतज्ञताविभोर होकर उदान की यह हर्षवाणी प्रकट की,

'पञ्च पञ्ञास वस्सानि रजोजल्लम धारयिं।'

५५ वर्ष, तक बिना नहाए शरीर पर धूल-मिट्टी मलते रहा।

'भुञ्जन्तो मासिकं भत्तं केसमस्सुं अलोचयिं।'

एक एक मास में केवल एक बार बाहर का भोजन करता रहा और अपने सिर और दाढ़ी-मूंछ के बालों का अंगुलियों से लुंचन करते रहा।

'एक पादेन अट्ठासिं आसनं परिवज्जयिं'

आसन का सर्वथा परित्याग कर दिया और इतने वर्षों तक रात दिन अधिकांश समय दोनों हाथ ऊंचे कर एक टांग पर खड़ा रहता था।

'सुक्खगूथानि च खादिं उद्देसञ्च न सादियिं'

यदा-कदा सूखी विष्टा खाता रहा पर गृहस्थों के निमंत्रण को नहीं स्वीकारता रहा।

'एतादिसं कत्वान बहुं दुग्गति गामिनं'

इस प्रकार अनेक दुखदायी कर्म करता रहा।

'वुय्हमानो महोघेन बुद्धं सरणमागमं'

यों दुःखों के महाबाढ़ में बहते हुए मैं भगवान बुद्ध की शरण में आ गया।

'सरणागमनं पस्स पस्स धम्मसुधम्मता'

अरे देखो, इस कल्याणकारिणी शरणागमन की महत्ता को देखो! मुक्तिविधायक धर्म की महत्ता देखो!

'तिस्सोविज्जा अनुप्पत्ता कतं बुद्धस्स सासनं'

मैंने आस्रवहीन अवस्था की तीनों विद्यायें प्राप्त की और बुद्ध का शासन पूरा किया याने उनकी शिक्षा पूरी की।

धन्य बुद्ध! धन्य धरम! धन्य सफल धर्मपथिक!

***

इसी संदर्भ में बुद्ध के जीवन काल की एक और घटना।

हिमवंत के समीप उत्कट्ठ (उत्कृष्ट) नगर में एक वैभव संपन्न ब्राह्मण कुल में उत्पन्न अंगणिक भारद्वाज। युवावस्था तक पहुँचते पहुँचते विभिन्न लोकीय विद्याओं में और शिल्पों में निष्णात् हुआ। परन्तु वैराग्य जागने के कारण संन्यासी हो अमरत्व के लिए तप करने निकल पड़ा। शास्त्रोक्त विधि के अनुसार अनेक प्रकार से अग्नि परिचर्या की और शरीर को कष्ट पहुँचाने वाले अनेक प्रकार के बाह्य तप किए। समझता था इससे चित्तशुद्धि होगी, भवबंधन से मुक्ति मिलेगी। पर ऐसा हुआ नहीं। सौभाग्य से बुद्ध जनपद चारिका करते हुए उस प्रदेश में से गुजरे। युवा तापस ने उनका धर्म प्रवचन सुना और अत्यंत प्रभावित होकर उनकी शरण ग्रहण की। प्रव्रज्या ली और विपश्यना साधना विधि सीखकर चिरकाल तक स्मृति और संप्रज्ञान का अभ्यास करते हुए अन्ततः अर्हत्व पद प्राप्त कर लिया। विमुक्ति के सुख से विभोर होकर वह अपनी जन्मभूमि की ओर गया और वहां अपने पूर्व परिवार के अनेक लोगों को उत्साहित कर धर्म में प्रतिष्ठित कर सकने में सफल हुआ।

निष्प्राण निर्जीव कर्मकांडों में और आत्मक्लेशीय मिथ्या तपों में उलझे हुए अनेक लोगों के प्रति असीम करूणा से आप्लावित होकर उन्हें मिथ्या मार्ग से मुक्त कर सत्पथ की ओर लगाने की कल्याण कामना लिए हुए वह चारिका पर निकल पड़ा। कुरूप्रदेश के किण्डिय नामक निगम से कुछ दूर अरण्य में से गुजरता हुआ, उत्तरापथ की ओर चला तो एक स्थान पर कुछ एक ब्राह्मणों को एकत्र देख। उनमें से कुछ उसके पूर्व परिचित भी थे। उन्होंने पूछा, "भो! भारद्वाज, तुम्हें यह क्या सूझा? अपनी परंपरा का पथ त्यागकर तुमने यह श्रमण परंपरा का पथ क्यों अपना लिया?"

अंगणिक भारद्वाज ने उन्हें बड़े करूण चित्त से समझाया, "भव विमुक्ति के लिए चित्तशुद्धि की खोज में वन में अग्नि की उपासना करता रहा और नाना प्रकार के आत्मक्लेश दायक तप करता रहा। पर सब निरर्थक साबित हुए। मैं उनमें इसीलिए उलझा रहा क्योंकि मुझे विशुद्धि के सही मार्ग की जरा भी जानकारी नहीं थी। जब सचमुच कल्याणकारी मार्ग मिला तो निहाल हो गया। कृतकृत्य हो गया। मानव जीवन सफल हो गया।"

"मैं आश्रम से आश्रम, अरण्य से अरण्य ऐसे थोथे कर्मकांड, कायकंटक तप करते हुए इसीलिए भटकता रहा।"

'तं सुखेन सुखं लद्धं पस्स धम्म सुधम्मतं।

तिस्सो विज्जा अनुप्पत्ता कतं बुद्धस्स सासनं॥'

विपश्यना का विशुद्धि-मार्ग का यक्लेशवाले तप के मुकाबले अत्यंत सुखद मार्ग है। साधक अतियों को त्यागकर सुखद मध्यम मार्ग अपनाता है और परम सुख निर्वाण की मुक्त अवस्था प्राप्त कर लेता है। इसीलिए कहता है, "मैंने सुख मार्ग से परम सुख प्राप्त किया। देखो धर्म की कैसी महानता है! मैंने मुक्ति की तीनों विधाएं उपलब्ध की और भगवान बुद्ध के शासन को पूरा किया। याने उनकी शिक्षा आद्योपांत पालनकर जीवन-उद्देश्य सिद्ध किया।"

और तत्पश्चात् सत्यदर्शी ब्राह्मण भारद्वाज अपने विमलचित्त से लोकहितार्थ उद्घोषणा करता हुआ कहता है,

'ब्रह्मबंधु पुरे आसिं इदानि खो'म्हि ब्राह्मणो।

तेविज्जो न्हातको चम्हि सोत्तियो चम्हि वेदगू॥"

पहले तो केवल नाम मात्र के लिए ब्राह्मण था। ब्राह्मणी नामवाली माता की कोख से जन्मा इसीलिए अपने को गर्व से ब्रह्मबंधु कहता था। परन्तु अब तो नया जन्म हो गया। उन भगवान सम्यक्‌सम्बुद्ध के उर से उत्पन्न हुआ और उनका ओरस पुत्र हूं जो कि ब्रह्मभूत हैं, ब्रह्मकाय हैं, धर्मभूत हैं, धर्मकाय हैं। धर्म से मेरा नया जन्म हुआ है अतः धर्म निर्मित हूं। ब्रह्म का शुद्ध जीवन जीता हूं अतः अब सही माने में ब्राह्मण हूं।

पहले केवल ३ वेदों के ग्रंथ पढ़ लेने के कारण नाम मात्र के लिए त्रिवेदी था परन्तु अब तो तीनों विद्याओं को पूरी करके सही माने में त्रिवेदी हो गया हूं। दिव्य दृष्टि और पूर्व जन्मों की स्मृति ही नहीं, उन दोनों से भी ऊंची तीसरी विद्या याने आस्रव-क्षय का पूर्ण साक्षात्कार करा देने वाली विद्या प्राप्तकर अब सही माने में त्रिवेदी हूं।

पहले तो किसी नदी में स्नान कर लेने के कारण अथवा किन्हीं धर्मशास्त्रों का पारायण कर लेने मात्र से अपने आप को स्नातक कहता था। केवल नाम मात्र के लिए स्नातक था। परन्तु अब तो पावन धर्मगंगा में डुबकी लगाकर स्नातक हुआ हूं। राग द्वेष और मोह का सर्वथा प्रक्षालन कर अक्षय निर्वाण महोदधि में डुबकी लगाकर सही माने में स्नातक हुआ हूं। केवल नाम मात्र के लिए नहीं।

पहले तो श्रुति ग्रंथो को पढ़-सुन लेने के कारण अपने आप को श्रोत्रिय कहता था। अब मुक्ति के श्रोत में पड़कर नितांत विमुक्त हो गया हूं इसलिए सही माने में श्रोत्रिय हूं।

पहले तो वेद के ग्रन्थो का पारायण करके अपने आपको नाम-मात्र के लिए ही वेदगू कहता था पर अब तो सचमुच वेदगू हो गया हूं। स्ववेदन के आधार पर आत्मज्ञान जगाकर अपने मानस के सारे कल्मष-कषाय दूर करके सकल इंद्रिय जगत ही नहीं बल्कि इंद्रियातीत अनंत अक्षय परम सत्य का स्वानुभूति के आधार पर साक्षात्कार करके स्ववेदन के आधार पर वेद पारगू याने वेदगू हुआ हूं। अतः नीम मात्र का ही नहीं, बल्की सही वेदगू हूं।

इसीलिए कहता हूं पहले मैं केवल नाम मात्र का था पर अब तो सचमुच सही ब्राह्मण, त्रैविद्य, स्नातक, श्रोत्रिय और वेदगू हूं।

धन्य है सही ब्राह्मण, धन्य है सही त्रिवेदी, धन्य है सही स्नातक, धन्य है सही श्रोत्रिय और धन्य है सही वेदगू! धन्य है सही विद्या का सही सफल साधक!

आओ, साधकों, हम भी ऐसे ही सही ब्राह्मण, सही त्रिवेदी, सही स्नातक, सही श्रोत्रिय और सही वेदगू बनें और भव भव से मुक्त होकर जीवन को सफल बनाएं और अपना कल्याण साधें।

कल्याण मित्र,

स. ना. गो.